DATTOPANT Ji
ON
BABASAHAB
Ambedkar

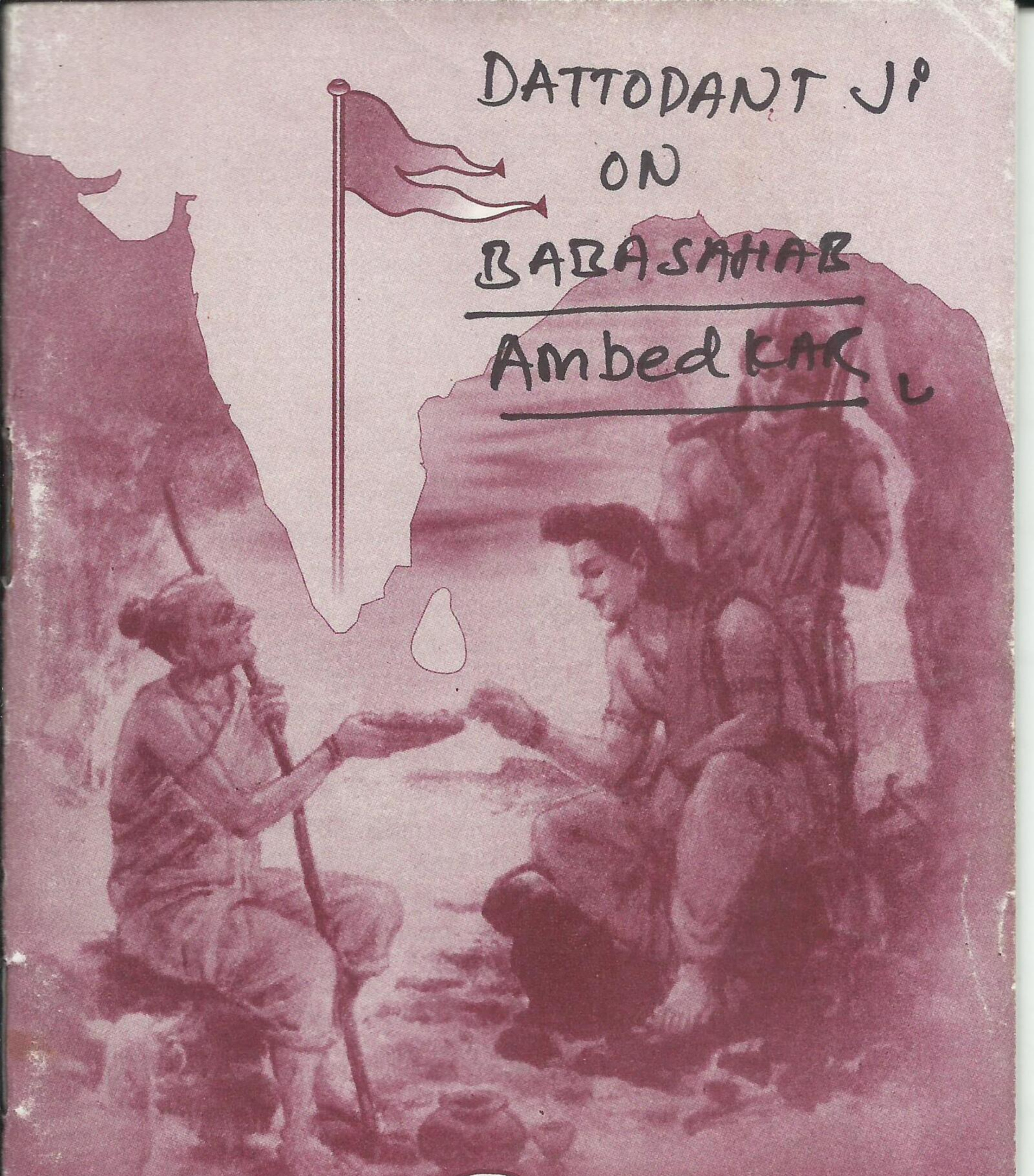

समरस हिन्दू समाज

विश्व संवाद केन्द्र, झारखण्ड

बाबा साहब और समरसता

- दत्तोपंत ठेंगड़ी

१९४२ से रा० स्व० संघ के प्रचारक। भारतीय मजदूर संघ, भारतीय किसान संघ, अ०भा० विद्यार्थी परिषद् एवं स्वदेशी जागरण मंच जैसे कई राष्ट्रवादी संगठनों के संस्थापक।

हिन्दुइज्म नहीं हिन्दूनेस

हम जानते हैं कि conceptually R.S.S. is co-extensive with the entire Hindu Nation and psychologically R.S.S. is identified with the entire Hindu nation, nothing sort of the entire Hindu Nation. अब हिन्दू शब्द आता है और हिन्दू शब्द के विषय में तरह-तरह की गलत बातें प्रचलित की जाती हैं। एक समय भोजन पर हम बैठे थे; प्रवीण तोगड़िया जी से मैंने कहा कि हमारी एक प्रार्थना है। उन्होंने कहा- क्या है? हमने कहा कि आपको अन्य दृष्टि से जो कार्य करना है, आप कीजिए लेकिन आपके लिए छोटी-सी प्रार्थना यही है कि हिन्दुत्व शब्द का भाषांतर आप हिन्दुइज्म मत कीजिए। हालाँकि हम सब करते आए हैं, मैं भी इसका दोषी हूँ। अभी भी मेरे मुँह से हिन्दुइज्म शब्द ही आता है किन्तु हिन्दू शब्द का भाषांतर हिन्दुइज्म न हो। उन्होंने कहा- क्या होना चाहिए? मैंने कहा कि हिन्दुत्व का भाषांतर Hinduness होना चाहिए। क्योंकि ism is a closed book of thought, Hinduness is not a closed book of thought. हिन्दू शब्द की जो कई विशेषताएँ हैं उसमें एक विशेषता यह है कि इसको प्राचीनत्व नहीं है 'It has no antiquity.' यह वेदों में नहीं मिलता, उपनिषदों में नहीं मिलता, पुराणों में नहीं मिलता, रामायण-महाभारत में नहीं मिलता यह इसकी एक विशेषता है और यही इसका श्रेष्ठत्व भी है। क्यों नहीं मिलता यह शब्द? इसका कारण ऐसा है कि **मानव-जाति के इतिहास के प्रारंभ में हम अपने को मानव ही समझते थे। बाकी**

मानव-जाति से अलग, पृथक, ऐसा हम अपने को नहीं मानते थे। इतना ही मानते थे कि हम मानव हैं, हम सुसंस्कृत हैं, दुनिया के अन्य लोग कम संस्कृत हैं, उनका सांस्कृतिक स्तर ऊँचा करना,- ये अपना काम है, इसलिए 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्'- हम सारी दुनिया को सुसंस्कृत करेंगे- यह घोष करते हुए जलमार्ग से, स्थलमार्ग से हमने दुनिया का भ्रमण किया था। चूँकि हम अपने को मानव ही समझते थे, हमारी प्रार्थनाएँ ऐसी हैं, हमारे साहित्य-पुराण जो हैं, वो भी ऐसा ही है- **"त्वां त्वां सम्परिपातु रक्षतु परिपातु विश्वतः।"** Let man protect men from all sides. सब मनुष्य के नाते ही सारी प्रार्थनाएँ हैं। इसलिए प्राचीन काल में ये हिन्दू शब्द नहीं था। कैसे आया? हम तो अपने को केवल मानव समझते थे। किन्तु धरती के पीठ पर कुछ ऐसे मानव-समूह निर्माण हुए जो खुद को संपूर्ण मानवता के साथ एकात्म होने के लिए तैयार नहीं थे। अपनी अलग पहचान बनाना चाहते थे। और आवश्यकता हुई तो तलवार के भरोसे अपनी पहचान लोगों पर थोपने की उनकी तैयारी थी। ऐसे मानव-समूह जब हिन्दुस्थान में आए तब आवश्यकता निर्माण हुई कि अरे! हम ये नहीं है। इनसे हम भिन्न हैं और इसलिए अलग से अपनी पहचान देना आवश्यक हुआ और वह पहचान देने वाला नाम भी हिन्दुओं ने खुद नहीं सोचा, बाहर के लोग पहले से कहते थे- सिंधु लोग हैं, हिन्दू लोग हैं। बाहर के लोगों ने ही यह नाम दिया था।

शुद्ध घी लिखना पड़ा

मैं पहली बार जब आर्वी से नागपुर को आया, 36 साल पहले की बात है, हम पढ़ाई तो नहीं करते थे, इधर-उधर घूमते थे। मार्केट में एक बात ख्याल में आई कि जो घी की दुकाने थीं उस पर बोर्ड इस तरह का था- 'आर्वी की घी की दुकान', 'वर्धा की घी की दुकान', बुल्ढाणा की घी की दुकान।' 42 में नागपुर छोड़ा, तो उस समय घूमते-घूमते एक बात ख्याल में आई कि बोर्ड बदल गये,- 'आर्वी की शुद्ध घी की दुकान', 'वर्धा की शुद्ध घी की दुकान', 'बुल्ढाणा की शुद्ध घी की दुकान'। हमने कहा कि भाई! ये बोर्ड क्यों बदल गये। एक ने पूछा- तुम कब आए थे नागपुर में? मैंने कहा- '36 वर्ष पहले। बोला- 6'इसीलिए प्रश्न कर रहे हो।' उस समय नागपुर के मार्केट में आने वाला सारा घी शुद्ध ही था। इसलिए इसको अलग से शुद्ध घी कहने की आवश्यकता नहीं थी। लेकिन महायुद्ध के पीरियड में जब डालडा, वनस्पति ऐसे

जेन्टलमैन हमारे मार्केट में आ गए तो हमें यह दिखाने के लिए कि हम ये नहीं, हम इनसे भिन्न हैं, शुद्ध शब्द डालने की आवश्यकता हुई। वे सब मानव ही थे किन्तु अभी जो लोग थे, उनसे भिन्नता दिखाने के लिए यह हिन्दू शब्द लाना पड़ा।

हिन्दू : umbrella term

हिन्दू नाम का रिलीजन नहीं है। रिलीजन की किसी भी परिभाषा में हिन्दू शब्द नहीं बैठता। किन्तु हिन्दू शब्द ये जो है umbrella term है, इसके अंतर्गत सभी रिलीजन आ सकते हैं। पूजनीय महात्मा गाँधी ने कहा कि इसके अंदर मुहम्मद पैंगबर, जीसस क्राइस्ट, येहोवा, जरस्थ्रुस्ट सब लोग आ सकते हैं। तो रिलीजन नहीं लेकिन सभी रिलीजंस का federation होने की क्षमता रखने वाला umbrella term, हिन्दू ही है। उदाहरण के लिए, हर जगह एक किराना माल की दुकान होती है। किराना माल के दुकान में सौ-सवा सौ-डेढ़ सौ चीजें होती हैं। कोई भी चीज आप ले सकते हैं। लेकिन आप किराना माल के दुकानदार को कहेंगे कि यह सौ रुपये का नोट लो और किराना नाम की एक चीज हमें दो तो वो नहीं दे सकता क्योंकि किराना नाम की कोई चीज नहीं है। इसके अंब्रेला टर्म के अंतर्गत सवा सौ-डेढ़ सौ बातें आलोक्य की जाती हैं वैसे ही हिन्दू रिलीजन नहीं है किन्तु federation of all religions बनने की क्षमता उसके अंदर है- ऐसा महात्मा जी ने कहा है।

एकात्मता हेतु शाखा

अब हमलोग राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के नाते सोचते हैं- संगठन करना है। संगठन का sense समरसता ही है। सामाजिक समरसता- इस दृष्टि से हमलोग विचार करते हैं। और प0पू0 डॉक्टर जी ने ऐसा तंत्र विकसित किया कि कई शताब्दियों से, पिछले 1000-1100 साल से जो समाज बिखर गया था, एक-दूसरे के साथ बात करने के लिए कोई तैयार नहीं- ऐसे समाज में संगठन कैसे निर्माण हो, इसका एक अद्भुत शाखा तंत्र का डॉक्टर जी ने निर्माण किया और इस तंत्र के कारण 1932 में ही विजयादशमी महोत्सव के अवसर पर भाषण करते समय डॉक्टर जी कह सके कि हमारे राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ में जातिवाद नहीं है, समाप्त हुआ है।

दो साल के बाद, सब जानते हैं, बताने की आवश्यकता नहीं है, 1934 में; वर्धा जिला के शीत शिविर में, पूजनीय महात्मा जी ने इसका प्रत्यक्ष अनुभव भी लिया। इस तरह से यह काम चलता रहा। एकात्मता, समरसता, संगठन निर्माण करने की क्षमता इसी तंत्र में है और किसी तंत्र में नहीं है- यह बात तो स्पष्ट है। किन्तु इस तंत्र की एक दूसरी विशेषता है। वोटर्स तो अपना बना लिया, कल चुनकर आ गए, काम हो गया, ऐसा नहीं है। दिल में गहरी जाकर बैठने वाली भावना- ये एकात्मता की, समरसता की भावना, निर्माण करने में समय लगता है, इसके कारण संघ का काम बढ़ने के लिए समय लगता है- यह बात स्पष्ट है।

हम केवल हिन्दू हैं

पूजनीय डॉ0 बाबा साहब अम्बेडकर संघ के विषय में पूरी जानकारी रखते थे और रखने का प्रयास भी करते थे। पूना में जब संघ शिक्षा वर्ग हुआ और डॉ0 हेडगेवार जी वहाँ थे, उस समय बाबा साहब भी आए थे, उन्होंने यही प्रश्न पूछा, जैसे महात्मा गांधी ने पूछा कि आपके यहाँ अस्पृश्य कितने हैं, अस्पृश्य उद्धार के लिए आप क्या करते हैं। डॉक्टर जी ने वही उत्तर दिया कि हम अस्पृश्य-उद्धार के लिए कुछ नहीं कर रहे हैं। हमारे यहाँ कोई नहीं जानता कि कौन अस्पृश्य है, कौन स्पृश्य है। हम एक ही बात बताते हैं कि **हम सब हिन्दू हैं।** एक पॉजिटिव बात- **हम सब हिन्दू हैं।** इसके कारण कोई जानता ही नहीं है कि कौन अस्पृश्य है, कौन स्पृश्य है। तो अलग-अलग स्थानों पर वे संघ के बारे में जानकारी लेते रहे।

बलि चढ़ना अस्वीकार

कुछ समय के बाद मा0 मोरोपंत, बाला साहब साठे, प्राध्यापक ठकार उनको मिलने के लिए औरंगाबाद गए, उन्होंने फिर से जानकारी ली कि भई! कितनी शाखाएँ हैं, कितने स्वयंसेवक हैं! उन्होंने बताया। बाबा साहब ने कहा कि इसका मतलब है कि मैं जब आया था संघ शिक्षा वर्ग में, उस समय जो संख्या थी उसमें कोई खास वृद्धि नहीं हुई है। मामला यहीं रुक गया। बाद में जब उनका दीक्षा-विधि का मामला जाहिर हुआ तो हमने उनको कहा, -" बाबा साहब यह अच्छा है कि आप अन्य कोई क्रिश्चियन, इस्लाम लेने के बजाय बौद्ध धर्म ले रहे हैं। ये तो अच्छा है लेकिन आप जब जानते हैं कि तथाकथित उच्च वर्णीय लोगों में से हम कुछ जवान

लोग ऐसे हैं जो अनुभव करते हैं कि **भूतकाल में हमलोगों के हाथ से कुछ पापकर्म अवश्य हुआ है, उसका परिमार्जन होना चाहिए और उसके लिए सबको साथ में लेकर संगठन खड़ा करने का प्रयास हमलोग कर रहे हैं।'** तो उन्होंने कहा- You mean R.S.S. हमने कहा- हाँ, R.S.S. वो बोले- You think I have not given thought to this matter तो मैंने कहा- आपने यह विचार नहीं किया ऐसा हम कैसे कह सकते हैं, आपने तो सब बातों पर विचार किया है। बताओ, तुम्हारा R.S.S. कब निर्माण हुआ है। उनको सब पता था, उनका स्टाइल था बोलने का। मैंने कहा- 1925 में। कितने साल हो गए? 25, 26 या 27, ऐसे ही कुछ था। बोले- तुम्हारी संख्या क्या है? मैंने कहा- मुझे मालूम नहीं। वे बोले- ऐसे प्रेस कांफ्रेंस टाइप मत बोलो, ठीक बात करो। मैंने कहा- वास्तव में मुझे मालूम नहीं। No, no for arguement's check कि तुम्हारी कोई 26-27 लाख संख्या है, चलेगा! मैंने कहा- चलेगा। तो बोले- अब बताओ कि 26-27 लाख हिन्दुओं को संगठित करने के लिए यदि तुमको 26-27 साल लगे, सारा हिन्दू समाज तुम्हारी कक्षा में आने के लिए कितना समय लगेगा। मैं बोलने जा रहा था कि उन्होंने कहा- बोलो मत। तुम क्या बोलने वाले हो, मैं जानता हूँ। मैं भी जानता हूँ कि Arithmetical Progression और Geometrical Progression- इसमें अंतर क्या है। किन्तु कुछ भी हो तो भी एक मेंढक बैल नहीं बन सकता और **मेरा समाज इतने साल तक राह नहीं देख सकता, राह देखने के लिए तैयार नहीं है। आज मेरे समाज की अवस्था ऐसी है कि शताब्दियों तक जिस पर अन्याय हुआ है, आज उसके बारे में इसको जानकारी हो गई है। एक चीढ़ मन में है और यही समाज है,** उनके शब्द थे- This is a society which is cannon fodder for communism. ऐसे ही समाज को cannon fodder बनाता है याने तोप का victim (बलि) बनाता है। This is exactly cannon fodder for communism और **मुझे ऐसी इच्छा नहीं हैं कि मेरा समाज कम्युनिस्ट हो। तुमलोग समझते हो कि तुम्हारे गोलवलकर कम्युनिज्म को रोकने वाले हैं। बोले- यह अर्द्धसत्य है। गोलवलकर कितनी भी अच्छी बात कहें, कितनी भी अच्छी तरह से कहें, मेरे लोग वो पढ़ेंगे ही नहीं, सुनेंगे ही नहीं।** For the simple reason that he is not scheduled caste वो केवल उच्चवर्णीय

ब्राह्मण हैं, वे पढ़ेगे ही नहीं। ध्यान में रखो और यह उनके वाक्य मैं अक्षरशः ही बता रहा हूँ कि between caste Hindus and communism, Golwarkar is the barrier but between Scheduled Caste and Communism Ambedkar is barrier- ये बात जरा ध्यान में रखो। इस तरह से उनके विचार चल रहे थे।

हृदय परिवर्तन नहीं हुआ

अपने जीवन के प्रारंभिक काल में, बचपन में, बहुत अपमान उनको अस्पृश्य के नाते बर्दाश्त करने पड़े। तो भी ये उनकी महानता थी कि उसके कारण कोई प्रतिशोध की भावना उनके मन में नहीं आई। ये गलत काम कर रहे हैं, संपूर्ण हिन्दू समाज एक होना चाहिए- यह उनकी भावना थी, और इसी दृष्टि से **1924 में** जब उन्होंने पहली संस्था स्थापित की- **'बहिष्कृत हितकारिणी सभा'**, तो इसके executive में अध्यक्ष, उपाध्यक्ष 4-5-6 जो थे, वे सब सवर्ण हिन्दू थे। उनके जात भाईयों ने कहा- अरे ये तो सब सवर्ण हैं तो उन्होंने कहा कि सबका साथ लेकर ही चलना पड़ेगा। शुरु से सबको साथ लेकर चलना- यही उनकी प्रवृत्ति थी। किन्तु बहुत प्रयास करने के बाद भी वह नहीं हो सका क्योंकि सवर्ण हिन्दुओं का हृदय-परिवर्तन हम नहीं कर सकते, यह कटु अनुभव उनको कई प्रयोगों के बाद आया। महाल का चौदार तालाब का सत्याग्रह; **जिस तालाब में बैल, भैंस, गाय पानी पी सकती थी, इसमें अस्पृश्य बंधु का प्रवेश भी नहीं, वहाँ का पानी नहीं पी सकते**- इसके लिए सत्याग्रह, कालाराम मंदिर के दर्शन का सत्याग्रह, बाकी भी जगह अमरावती में हुआ, परवती में हुआ। कई सत्याग्रह हुए। सबका उद्देश्य सवर्ण हिन्दुओं का हृदय-परिवर्तन हो, यही था। लेकिन साढ़े पाँच-पौने छः साल तक कालाराम सत्याग्रह करने के बाद जब केवल पत्थर खाने पड़े, लाठियाँ झेलनी पड़ीं, सर फूट गए। फिर उन्होंने ऐसा लिखा और कहा कि "**हमने हिन्दुओं का हृदय-परिवर्तन हो, इसलिए इतना सारा किया है। ये सारा व्यर्थ हुआ, ऐसा लगता है। किंतु हिन्दुओं का हृदय-परिवर्तन हो ही नहीं सकता।**

सिक्ख पंथ की ओर झुकाव

अब इसके लिए हमको ज्यादा समय देना ठीक नहीं, अब हम धर्मांतरण का विचार करें"- ऐसा उन्होंने यरवला में, 1937 में, घोषणा की और धर्मांतरण की

घोषणा के बाद तो सबलोग हिल गए। धर्मांतरण के बारे में भी जगद्गुरु डॉ. कुर्तकोटि, डॉ. मुंजे, स्वातंत्र्य वीर सावरकर- इनके सलाह से उन्होंने Public Statement दिया कि **मैं धर्मांतरण का विचार कर रहा हूँ किंतु मैं इस्लाम और क्रिश्चियनिटी नहीं लूँगा क्योंकि इसके कारण इतना बड़ा समाज De-nationalised हो जाएगा। इनकी सलाह है कि मैं सिख पंथ को स्वीकार करुँ तो मैं सिख धर्म को ही स्वीकार करुँगा**- ऐसा उन्होंने घोषित किया। पाँच लोगों को भेजा, स्वर्ण मंदिर में कि क्या है, जरा देखिए। किंतु ये Message लेकर आ गए कि **वहाँ धर्म वगैरह कुछ नहीं है, मारपीट है, पॉलिटिक्स है, बाकी झगड़े हैं, धर्म नहीं है, इसलिए वो बात वहाँ रह गई**। किंतु जब सिख धर्म लेने का विचार किया, उस समय, इनके कहने पर मैं ऐसा विचार कर रहा हूँ, यह उन्होंने स्पष्ट रुप से घोषित किया।

संवादात्मक रिनैसाँ

अब 1857 से लेकर महाराष्ट्र में, बंगाल में, पंजाब में, तमिलनाडु में, राजस्थान-गुजरात में, विभिन्न प्रदेशों में, जितने समाज-सुधारक निर्माण हुए सबके मन में यह विचार था जैसे डॉ. राधाकृष्णन ने प्रकट किया कि यह हमारे हिन्दू समाज का रिनैसाँ का पीरियड है, पुनः प्रबोधन का पीरियड है। **साथ ही साथ सबके मन में यह भी भावना थी कि यह पुनः प्रबोधन (रिनैसाँ) यूरोप के स्टाइल पर नहीं हो सकता, भारतीय संस्कृति के स्टाइल पर होना चाहिए और दोनों में खास अंतर यह रहा कि एक द्वंद्वात्मक यूरोपीय स्टाइल, दूसरा संवादात्मक भारतीय स्टाइल और भारतीय स्टाइल से ही रिनैसाँ होना चाहिए, सबकी यही कल्पना थी। बाबासाहब की भी यही कल्पना थी।** उन्होंने भी अस्पृश्यता निवारण का काम किया, संघर्ष किए। "रिनैसाँ होगा, करना चाहिए और वह Dialectical न हो, Non-dialectical हो"- ऐसा उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा।

अहं ब्रह्मास्मि

बुद्धिज्म स्वीकार करने का निर्णय लेने के पूर्व वे ऐसा कहते थे कि यह जो ब्रह्मवाद है- 'अहं ब्रह्मास्मि, तत्वमसि, सर्व खल्विदं ब्रह्मं' - लोकतंत्र का इससे मजबूत आधार और कहीं मिल नहीं सकता। यही रिनैंसाँ का आधार होगा। इसी

आधार पर उन्होंने काम का प्रारंभ किया।

धर्माचार्यों की हठवादिता एवं अस्वीकार्यता

संपूर्ण हिन्दू समाज की एकता उनको अभिप्रेत थी। किंतु जब संपूर्ण हिन्दू समाज एक नहीं हो सकता- ऐसा दिखा। कारण : **धर्माचार्यों की हठवादिता- एक, दूसरी बात- हिन्दुत्वनिष्ठ बहुत सारे लोग डॉ. अम्बेडकर के विचारों से सहमत थे किंतु उनका कहना था कि इनके सहमत होने से मेरा क्या लाभ होगा, इनका प्रभाव धर्माचार्यों एवं सवर्ण हिन्दुओं पर नहीं है।** एक बार हमने उनको गुरुजी का नाम लेकर संघ की चर्चा की तो उन्होंने कहा कि यह बताओ, **तुम्हारे गोलवलकर यदि एक फत्तवा निकालते हैं और शंकराचार्य दूसरा फत्तवा निकालते हैं, एवरेज सवर्ण हिंदू किनकी बात मानेगा। मैंने कहा- शंकराचार्य की।** फिर मुझे गोलवलकर और संघ का नाम बताकर क्या लाभ है। 12 दिसंबर 1969 को विश्व हिंदू परिषद् के मंच से, उडुपी में, यह घोषणा हुई-**''न हिन्दू पतितो भवेत्, हिन्दवः सोदराः सर्वे''**- यह घोषणा यदि महाल के चौदार तालाब के सत्याग्रह के पहले होती तो हिन्दू समाज का इतिहास बदल जाता।

विषमता : हृदय का रोग

गुरुजी का भी यही विचार था। पूना में कुछ प्रगतिशील सोशलिस्ट लोग जब गुरुजी से बात करने गए तो अन्य बातों को छोड़कर एक बात उन्होंने यह कही कि भई, 'अस्पृश्यता नहीं है',- यह आचार्यों के मुँह से आना चाहिए। एक सोशलिस्ट ने कहा कि Who is this Shankaracharya? गुरुजी ने कहा कि शंकराचार्य को आप नहीं मानते किंतु जिनका हृदय-परिवर्तन अभिप्रेत है, (क्योंकि गुरुजी कहते थे कि अस्पृश्यता सवर्ण हिन्दुओं के हृदय का रोग है) जिनके हृदय से अस्पृश्यता का रोग आप दूर करना चाहते हैं, ये सवर्ण न आपको मानते हैं, न मुझे मानते हैं, वे आचार्यों को ही मानते हैं। दोनों के विचार किस तरह समान जाते थे, इसका एक छोटा-सा उदाहरण। इस तरह से काम करते-करते चिंतन भी चल रहा था। चिंतन चल रहा था कि स्वतंत्र, सामर्थ्य युक्त भारत, प्रथम क्रमांक के राष्ट्रों में जिसकी गिनती हो सके, ऐसा होना चाहिए। आखिर में भी उन्होंने कहा, उनका वाक्य है-" I am the first Indian and Indians last and we are all Indians, first and

last." किंतु यह जो Indianess की भावना है, यह सभी के अनुसार नहीं है।

जाति एवं वर्ण का राजनैतिक दुरुपयोग

धर्माचार्यों की हठवादिता- यह एक बात थी और दूसरी बात थी- राजनैतिक। 1942 में, नागपुर में, एक All India अधिवेशन में Scheduled Caste Federation की उनको स्थापना करनी पड़ी। मूलतः हेतु नहीं था लेकिन करनी पड़ी, क्यों? क्योंकि राजनीतिक क्षेत्र में सवर्ण हिन्दू काँग्रेस के गाँधी को ही अपना नेता मानते थे, और महात्मा जी और अम्बेडकर जी का कई बातों पर हमेशा विवाद रहता था। प्रमुख बात थी कि वर्ण क्या है? वर्ण के बारे में अम्बेडकर जी ने गाँधी जी को कहा कि "तुम्हारा वर्ण है, वह शास्त्रसिद्ध नहीं है। वेदों ने जो वर्ण की व्यवस्था बताई है और दयानंद सरस्वती, स्वामी श्रद्धानंद वगैरह जिस वर्ण को मानते हैं वह वर्ण गुणक्रमाधिष्ठित है, यह तुम मानते नहीं हो। तुम जन्मनाधिष्ठित मानते हो, जन्मना जाति मानते हो। वास्तव में तुम जिसको वर्ण कहते हो वह जाति-व्यवस्था है। Occupation by Birth यानि जाति, Occupation by Work याने वर्ण।" यह गाँधी जी मानने के लिए तैयार नहीं थे। चूँकि सवर्ण हिन्दुओं पर गाँधी जी का ही प्रभाव था, हिन्दुत्वनिष्ठ लोगों का प्रभाव उस समय नहीं था, जिसके कारण उनको संघर्ष करना पड़ा।

बुद्ध से प्राप्त

संघर्ष करते हुए भी हिन्दू समाज के बारे में जो पहले भावना थी, वो उस वक्त दूर नही हुई क्योंकि उनका कहना था कि हिन्दू-शास्त्र, धर्म बहुत अच्छा है किंतु हिन्दू समाज के प्रत्येक व्यक्ति का व्यवहार खराब है। शास्त्र में अलग बातें बताई हैं, समाज का एक-एक व्यक्ति गलत ढंग का व्यवहार कर रहा है। वे कहते थे कि मैं सिद्धांत को मानता हूँ और प्रमुख रुप से Liberty, Equality, Fraternity- ये तीन तत्व हैं, मैं मानता हूँ। किंतु कोई ऐसा न सोचे कि मैंने ये सिद्धांत फ्रेंच राज्य क्रांति से लिया है। नहीं, **यह सिद्धांत मैंने भगवान बुद्ध से लिया है।** पश्चिम में ये सिद्धांत अमल में नहीं आ सके, इसका कारण उन्होंने बताया कि जब स्वतंत्रता आई तब समता गई, जब समता आई तो स्वतंत्रता गई। समता और स्वतंत्रता एक साथ कहीं रह नहीं सकी यूरोप में, क्योंकि तीसरी बात नहीं आई थी-बंधुता। उन्होंने स्पष्ट

रुप से कहा कि **Fraternity याने भ्रातृभाव- इसी का नाम धर्म है।** 'धर्म का आधार जब तक नहीं है, तब तक यह नहीं चल सकती- ऐसा उन्होंने कहा था।

बुराई अस्वीकार्य

धर्म के विषय में बचपन से ही उनके संस्कार अच्छे थे। महान धार्मिक थे। वे अपने अनुयायियों को बताते थे कि तुमको राजनीति में रस है, **मुझे राजनीति में रस नहीं है। मुझे धर्म में रस है,** तुमको धर्म में रस नहीं है। वे अच्छी तरह जानते थे कि धार्मिक ही उनका पिंड था और खोज करते-करते वे इस नतीजे पर पहुँचे थे। जिस ढंग से ब्रह्मवाद के बारे में उन्होंने कहा कि' जिस तरह लोकतंत्र का, रिनैंसाँ का आधार यह अहं ब्रह्मस्मि का त्रिसूत्र हो सकता है, इसी तरह मजबूत आधार बुद्धिज्म भी हो सकता है।' फिर बुद्धिज्म की ओर वे झुक गए। बुद्धिज्म को भी उन्होंने अंधश्रद्धा से स्वीकार नहीं किया, जैसे के वैसे स्वीकार नहीं किया। महायान और हीनयान, ऐसे जो पंथ थे उनमें से किसी भी एक पंथ को उन्होंने स्वीकार नहीं किया। सबको ये पता था, वे भी बताते थे और उनका जो Magnum opus "Buddha & its Dhamma" है- दोनों का अर्थ स्पष्ट होता है कि वे अपने ढंग से Buddhism को mould करना चाहते थे, परम्परागत सभी बातों को अपनाना नहीं चाहते थे। Buddhism की दीक्षा देने के लिए चार जगत्प्रसिद्ध भिक्षुओं को नागपुर बुलाया गया था। दीक्षा दिवस के पूर्व सायं काल चाय पर सब लोग एकत्र थे। चाय आ गई। खाने की चीजें आ रही थीं। इसी समय बाबा साहब ने उनको बताया, बोले- "भई! देखो, मैं आप सब लोगों को बताना चाहता हूँ कि आपका जो त्रिशरण है- बुद्धं शरणं गच्छामि, धम्मं शरणं गच्छामि, संघं शरणं गच्छामि- आपके त्रिशरण में से मैं एक बोलने के लिए तैयार नहीं हूँ- 'संघं शरणं गच्छामि,' क्योंकि मैं जानता हूँ कि बौद्ध-संघ किस तरह से भ्रष्ट हुए थे। इसलिए मैं 'संघं शरणं गच्छामि'- ऐसा नहीं कहूँगा।" सब ऐसे हिल गऐ कि चाय वैसी की वैसी रही, खाने की चीजें जो आ रही थीं, वैसे के वैसे रहीं। सब अपने कमरे में चले गए। अब क्या करना! क्योंकि यदि त्रि-शरणम् नहीं कहते, तो क्या अनर्थ हो जाएगा, सब जानते थे।

जागतिक हित हेतु स्वमत त्याग

आखिर में, रात में वालिचिन्ना और रमेन्द्र गोड़बोले बाबासाहब के पास

आए और उनको कहा कि आपका कहना बिल्कुल ठीक है किन्तु इसका दूसरा भी संदर्भ देखिए। यदि त्रि-शरण में से केवल दो शरण बतायेंगे त्तो जागतिक बौद्ध समूह में आपको शामिल नहीं किया जा सकता और यदि आप जागतिक बौद्ध समूह में शामिल नहीं होते तो आप जागतिक बौद्ध समूह को अपनी इच्छा के अनुसार mould नहीं कर सकेंगे। इस argument पर उन्होंने फिर स्वीकार किया। Re-conciliation हुआ और फिर दूसरे दिन उन्होंने त्रि-शरण की प्रतिज्ञा ली। बहुत लोग इस बात को नहीं जानते हैं। इस तरह वे अपने ढंग से यह सबकुछ करना चाहते थे।

बड़े लोगो की बड़ी बात

देश की दृष्टि से भी, उन्होंने बहुत बड़ा काम किया। देश स्वतंत्र होने की जब संभावना प्रबल हो गई तो उस समय पंडित नेहरू और सरदार वल्लभ भाई पटेल दोनों ने मिलकर यह तय किया कि देश स्वतंत्र होता है, तो अपना संविधान भी बनाना पड़ेगा और संविधान बनाने के लिए Ezri Denin नाम के एक फ्रेंच संविधानशास्त्रज्ञ को बुलाना चाहिए और उनको बताना चाहिए कि भारत का संविधान बनाओ- यह विचार लेकर पंडित नेहरू और वल्लभ भाई पटेल गाँधी जी के पास गए। गाँधी जी ने कहा- 'यह तुम क्या कर रहे हो। इतना बड़ा, पुराना अपना देश और हमारा संविधान बनाने की क्षमता हममें से किसी में नहीं, यह दृश्य दुनिया को कैसा दिखेगा?' दोनों ने कहा कि 'अपने पास कौन है!' **महात्मा गाँधी ने डॉ0 अम्बेडकर का नाम बताया।** बड़े लागों की बातें भी बड़ी होती है! जीवन भर झगडा किया लेकिन संविधान कौन बनाएगा, तो अम्बेडकर का नाम बताया। मंत्रिमंडल में लेने की जवाहरलाल की इच्छा नहीं थी। **गाँधी जी ने कहा कि मंत्रिमंडल में लेना पड़ेगा।**

संवैधानिक नीतिमत्ता और सामाजिक चैतन्य आवश्यक

'एक बार जब संवैधानिक कानून बन गया तो लोगों के अधिकार सुरक्षित रहेंगे' यह प्रचलित लोकधारणा की असत्यता संविधान बनाते समय बाबासाहब को पता था। लोगों के अधिकार तब तक सुरक्षित नहीं रह सकते जब तक समाज में इसके लिए अनुकूल मत न हो। यही बात अब्राहम लिंकन ने कही, और भी विचारकों ने कही, और वे जानते थे, वे कहते थे कि "constitutional morality and

social conscious are more important than the constitution itself." यदि constitutional morality संवैधानिक नीतिमत्ता और सामाजिक चैतन्य बुद्धि यदि समाज में नहीं है, आप कितना भी अच्छा constitution बनाइए, इससे काम नहीं होगा। और constitution कितना भी खराब रहे लेकिन constitutional morality और social conscious रही तो समाज ठीक ढंग से अपना काम करेगा, इसकी उनको जानकारी थी।

संवैधानिक संशोधन की स्वीकृति

कुछ वर्ष पूर्व, जब यह कहा गया कि भई! constitution में कुछ बदल होना चाहिए, review होना चाहिए। तो लोगों ने कहा कि Political लोग (पॉलिटिकल का मतलब ही गैर-जिम्मेदार, ऐसा आजकल होने लगा है), डॉ0 अम्बेडकर का अपमान कर रहे हैं। वास्तव में 25 नवंबर 1949 के अपने भाषण में स्वयं डॉ0 अम्बेडकर ने कहा था कि हमारी जितनी बुद्धि थी उसके आधार पर हमने यह कंस्टीट्यूशन बनायी है, चाहे तो ऐसा कहिए कि ये कंस्टीट्यूशन है यानि कंस्टीट्यूएंट असेंबली के सदस्यों का मत है। किन्तु जेफरसन को कोट करते हुए, (अमेरिकन कंस्टीट्यूशन में declaration का लेखक जेफरसन, उसको उद्धृत करते हुए) उन्होंने कहा कि जेफरसन ने कहा था कि "आज हम declaration कर रहे हैं, कंस्टीट्यूशन बना रहे हैं लेकिन next generation को कुछ ऐसा यदि लगा कि यह कंस्टीट्यूशन काम नहीं करेगी, इसमें बदल करने का उनको पूर्ण अधिकार है"- यही बात मैं भी कह रहा हूँ। **यदि कालांतर में इसमें परिवर्तन करना आवश्यक हुआ तो कर सकते हैं, यह स्वयं उन्होंने 25 नवंबर 1949 के भाषण में कहा।** यह सारा ध्यान में रखते हुए, एक बहुत बड़ा बवंडर महाराष्ट्र में खड़ा हुआ था, यह हम सब जानते हैं। उनके सामने बहुत समस्या थी। लोग समझते हैं कि बाबासाहब द्वारा बनाया हुआ कंस्टीट्यूशन है। किन्तु बाबासाहब के मन में जो था, वो कंस्टीट्यूशन में नहीं ला सके, बहुत-सी चीजें को।

Constituent Assembly और Parliament : अलग-अलग चीज

पहली difficulty यह थी कि constituent assembly में political

leaders थे जिनमें बहुत से लोग यह जानते भी नहीं थे कि constituent assembly का मतलब क्या होता है? स्वयं जवाहरलाल जी ने कहा कि हमारे कांग्रेस के बहुत से सदस्य जानते ही नहीं है कि constituent assembly क्या होती है, वे constituent assembly को all party convention मानते हैं। बाबासाहब ने कहा कि यह constituent assembly अलग बात है, पार्लियामेंट अलग बात है। Constitutent assembly और Parliament में क्या अंतर है, यह explain करने का काम बाबासाहब को करना पड़ा। किन्तु न जानने के कारण Constitutent assembly में Parliament जैसे ही अपना स्वार्थ, जातिगत स्वार्थ, दलगत स्वार्थ को ही लेकर लोग चले और सबको accomodate करने का काम बाबासाहब को करना पड़ा।

अपनी आपत्ति युक्तिपूर्वक दर्ज

कई बातें, जैसे 370 का सवाल चल रहा है, नेहरू जी जानते थे कि इनको पसंद नहीं है- 370, शेख अब्दुल्ला को उनके पास भेजा। शेख अब्दुल्ला उनको persuade नहीं कर सके। किन्तु जिस समय प्रत्यक्ष constitutent assembly में यह सवाल आया, **तब वे प्रारूप समिति के चेयरमैन होने के कारण एक बार जो बात तय हो गई, उसके बारे में वे स्वयं** (according to protocol) **असेंबली में बोल नहीं सके तो उन्होंने अपने मित्र मौलाना हजरत मोहानी के द्वारा धारा 370 का अपना विरोध रजिस्टर करवाया।** फिर कई बार उन्होंने अपने मत दूसरों के द्वारा रजिस्टर करवाए किन्तु जो constitution थी, वह उनकी इच्छा के अनुसार थी, ऐसा नहीं है।

संविधान का संकलक

इसलिए जब लोगों ने कहा कि आप ये दोष बता रहे हैं! You are the maker of the constitution, तो उनका वाक्य था- No, my friends, I am not a maker of the constitution, I am just a hake who wrote down what you told to me. इस तरह की उनकी भूमिका थी। फिर उन्होंने यह भी कहा कि इसके कारण **हमारे मन की इच्छा पूरी नहीं होती। यहाँ आर्थिक लोकशाही नहीं**

आती। यहाँ दलित लोगों का उद्धार नहीं होता। जो शोषित-पीड़ित हैं उनकी अवस्था और खराब होती जायेगी। इस अवस्था में I will revolt and I will burn the constitution; I have written मेरा है ठीक है but I will burn the constitution. ऐसा उन्होंने कई बार publicly कहा। 'इस constitution के द्वारा देश का भला नहीं हो सकता, गरीबों का भला नहीं हो सकता' - इसकी स्पष्ट कल्पना उनको थी।

जनता का भला नहीं

He was for democracy, but he was not for parliamentary democracy बहुत लोगों को इसका अंतर समझ में नहीं आया। He was for democracy but he was not for parliamentary democracy, क्यों? क्योंकि "Parliamentary democracy में वही सरकार बना सकते हैं जिनकी पार्लियामेंट में majority हो। पार्लियामेंट में मेजोरिटी हो इसके लिए ज्यादा सांसदों को चुनकर आना चाहिए। ज्यादा सांसदों को चुनकर लाना, तो पैसा चाहिए। पैसा पैसे वालों से ही आता है और पैसेवाले अपना पैसा देंगे तो अपना काम भी साधेंगे। इसलिए पैसेवाले से पैसा लेना पड़ता है, पैसेवालों के काम को अमल में लाना पड़ता है और इसके कारण **Parliamentary democracy जब तक है तब तक शोषित, पीड़ित, दलित लोगों का उद्धार हो ही नहीं सकता**," यह उनको पता था। उन्होंने यह भी कहा कि मैं revolt करुंगा किन्तु प्रत्यक्ष constitution लिखते समय You have to accomodate all the view points in the constituent assembly. इसके कारण यह कहना गलत है कि constitution उनकी इच्छा के अनुसार है।

हठवादिता

देश का विचार उनके सामने सबसे ज्यादा था। आज उनकी प्रतिमा ऐसी है कि वे अस्पृश्यों के प्रहरी, अस्पृश्यों के नेता हैं। ऐसा नहीं है। ये तो ठीक है धर्माचार्यों की हठवादिता के कारण, गांधीजी और कांग्रेस के विरोध के कारण, उनको अस्पृश्यों के हितों के लिए संघर्ष करना पड़ा। किन्तु केवल अस्पृश्यों का उद्धार यह उनका विचार नहीं था। **संपूर्ण हिन्दू समाज के लिए उनका विचार था। हिन्दू संगठन को वे बहुत महत्व देते थे। और हिन्दू संगठन, यह राज्य से भी**

अधिक महत्वपूर्ण है- ऐसा वे कहते थे। यहाँ तक कि यरवला में धर्मांतर की घोषणा होने के बाद भी उन्होंने प्रकट-सभा में यह कहा कि **"यदि हिन्दू मेरी सहायता चाहते हैं, हिन्दू संगठन के लिए, मैं सहायता करने के लिए तैयार हूँ।"** यह धर्मांतरण की घोषणा के बाद उन्होंने प्रकट-सभा में कहा। यह देखने की बात है।

अल्पसंख्यक शब्द अस्वीकार

भविष्य को देखते थे। इसके कारण constitution बनाते समय शब्द-रचना के बारे में वे बहुत सावधान थे। एक, अल्पसंख्यक इस विषय को लेकर कितना बखेड़ा खड़ा होता है, आप जानते हैं। उन्होंने 'अल्पसंख्यक' शब्द ही उपयोग में नहीं लाया। वे जानते थे कि अल्पसंख्यक शब्द के कारण तरह-तरह के झगड़े खड़े हो सकते हैं, तो उन्होंने "a section of the population"- ऐसा शब्द प्रयोग में लाया। अल्पसंख्यक शब्द वे नहीं लाए।

फेडरल नहीं यूनियन

हमारे constitution का स्वरूप क्या है? लोग कहते हैं कि federal है। उन्होंने सोचा कि federal कहने के बाद आज तो चल जाएगा लेकिन 30-40 साल के बाद इसके कारण गलत बातें आ जायेंगी और फिर इसके जो constituent unit, states हैं, ये हरेक अपना-अपना स्वतंत्र अस्तित्व बनाएँगे; ऐसी आपत्ति न आ जाए, इसलिए उन्होंने federal नाम नहीं लिया, 'Indian Union' नाम लिया और constituent Assembly में यह बताया कि 'Indian Union' नाम इसलिए दे रहा हूँ कि आगे चलकर federal शब्द के कारण आने वाले झंझट निर्माण न हो। बहुत लंबा विचार करते हुए उन्होंने ऐसा किया था।

सोशलिस्टों का पाखंड

एक बार, स्वराज्य प्राप्ति के पश्चात् उनके मन में यह विचार आया कि भई! अब Scheduled Caste का अलग संगठन करना, चलाना अच्छा नहीं। इसलिए Scheduled Caste Federation के लोगों के साथ उनकी बातचीत भी होती थी कि भई अब Scheduled caste federation को dissolve किया जाय। इतने में बम्बई का चुनाव आया, जिसमें अशोक मेहता खड़े थे और Scheduled

Caste के लोगों की धारणा यह थी कि महाराष्ट्र में सबसे प्रोग्रेसिव पार्टी यदि कोई होगी तो सोशलिस्ट पार्टी ही। इसलिए उन्होंने सोशलिस्ट पार्टी के साथ पैक्ट किया। यह अम्बेडकर और अशोक मेहता का ही pact था। किन्तु जब चुनाव के नतीजे आए तो बाबासाहब के पास हर constituency में किस जाति के कितने लोग हैं, सूची थी। उन्होंने देखा कि बाबासाहब के बक्से में केवल अस्पृश्यों के ही वोट हैं किन्तु स्पृश्यों के सारे वोट transfer हुए अशोक मेहता के बक्से में। यह जब देखा तो उनको और Scheduled Caste Federation के लोगों को बहुत गुस्सा आ गया और उन्होंने कहा कि **अब ये तटबंदी निर्माण हुई**। पहले भी एकाध थोड़ा फर्क हुआ था स्वराज्य आने के बाद, लेकिन इस चुनाव में सोशलिस्टों का जो व्यवहार रहा इसके कारण उन्होंने कहा कि अब तटबंदी निर्माण हुई है। इधर का उधर नहीं जा सकता, उधर का इधर नहीं आ सकता- ऐसी भावना उनके मन में और सभी Scheduled Caste Federation के लोगों के मन में उस समय निर्माण हुई थी।

वोट जलाना असंवैधानिक

संयोग की बात थी कि भंडारा का उपचुनाव आया, बाबासाहब खड़े हुए, अशोक मेहता भी खड़े हुए। सवाल आया कि अब भी यदि बंबई जैसा होता है तो हमारे सारे वोट यदि अशोक मेहता को जाते तो उनके तो आने वाले नहीं थे। इस अवस्था में बाबा साहब चुनकर नहीं आ सकते, क्या करना! तो कार्यकर्ता बैठे, विचार चला, तो उन्होंने सोचा हमारे विदर्भ में कैसा है- वोट जलाना; (उस समय दो वोट रहते थे) वोट जलाना याने एक वोट देना ही नहीं, एक ही वोट देना। तो बाबासाहब इलेक्शन मीटिंग में आये, पूछा कि भई! क्या बातें चली हैं। बोले- हम सोच रहे हैं कि दूसरा वोट जलाना चाहिए। क्यों? ऐसी बात है कि यदि हम एक वोट नहीं जलाते तो दूसरा वोट अशोक मेहता को ही देना पड़ेगा। इस स्थिति में आप नहीं चुनकर आ सकते। उन्होंने कहा कि **मैं केवल संविधान का निर्माता नहीं हूँ, मेरा तो स्वभाव भी संविधानात्मक है। मैं आपको वोट जलाने की सलाह नहीं देता हूँ, दूसरा जो कुछ भी करना है, करो।**

संघ ने तटबंदी तोड़ी

चुनाव हुआ। उस समय प0पू0 श्री गुरुजी बहुत बारीक नजर से सब बातों

को देखते थे, उसके बारे में जानकारी लेते थे। हमलोग राजनैतिक क्षेत्र में थे। मैं था, बच्छराज व्यास थे, सुन्दरलाल राय थे। हमसे एक-एक व्यक्ति के बारे में, घटना के बारे में पूछते थे और बाबासाहब के मन में यह तटबंदी की भावना आ गई, यह देखकर उनको बड़ा दुःख होता था। यह जो चुनाव आया तो गुरुजी ने हम स्वयंसेवकों को कहा कि भई! **राजनीति का जो होना है, सो होने दो किन्तु समाज की दृष्टि से, सामाजिक अभिसरण की दृष्टि से अपने लिए यह बहुत अच्छा मौका है। इस चुनाव में हमारी सारी मशीनरी बाबा साहब के चुनाव के लिए काम करे और यह बाबा साहब को, Scheduled Caste नेताओं को, बाकी जनता को भी ध्यान में आना चाहिए कि संघ मशीनरी ने बाबासाहब के लिए काम किया, ऐसी सलाह दी, और ऐसा हुआ।** बाबासाहब चुनाव हार गए किन्तु उनके पास जो सूची आई थी कि किस जाति के कितने हैं, तो अस्पृश्य मत जितने थे, इससे और भी बहुत सारे मत जो अस्पृश्य नहीं थे, ऐसे अपने बक्से में आये, यह उन्होंने देखा। दीक्षा-विधि के पश्चात् वो श्याम होटल में ठहरे थे। श्याम होटल में Scheduled Caste Federation के राजनीतिक नेताओं की सभा हुई। उनके सामने भाषण करते समय उन्होंने कहा कि "मैं भंडारा का चुनाव हार गया, इसके कारण मुझे दुःख नहीं क्योंकि मैं हारने वाला हूँ, यह मैं पहले से ही जानता था। किन्तु इस चुनाव से मुझे बहुत समाधान हुआ है। और समाधान यह हुआ कि **मुंबई के चुनाव के बाद मेरी जो धारणा थी कि ये तटबंदी है, यह तटबंदी टूट गई क्योंकि मुझे सवर्णों के बहुत सारे वोट मिले हैं। यह देखकर मुझे बहुत आनंद हुआ और अब हमें, हमारी जो परंपरागत धारणा है, वो छोड़नी चाहिए। अलग से अपना चूल्हा लगाना, यह छोड़ना चाहिए और सभी लोगों को लेकर चलने वाला republican पक्ष हमलोग स्थापन करने वाले हैं। इसमें सभी लोगों को हम प्रवेश दें; क्या सवर्ण, क्या अस्पृश्य, सभी लोगों को।"** तो इस तरह से तटबंदी टूट गई, इसका अनुभव उनको आया। बहुत दुर्भाग्य की बात है कि उनका जो यह भाषण हुआ- तटबंदी टूट गई, इसके केवल 53 दिन के बाद उनका महानिर्वाण हुआ। यदि वे जीवित रहते तो शायद इतिहास में और कुछ मोड़ आ सकता था।

समरसता वर्द्धन

मेरे कहने का मतलब इतना ही है कि हम राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के

लोग, जो संपूर्ण हिन्दू समाज का संगठन करना चाहते हैं, उन्हें, जो विविध उपाय बताए गए, repeat करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि यद्यपि ये कहा जाता है कि Public memory is short, your memory is not short, you are remembering everything that has been said so far. तो सारे जो उपाय बताए गए और भी खोजकर नए उपाय करते हुए यह जो तटबंदी की भावना है, यह कैसे नष्ट होगी, ये देखना चाहिए। हमारी जिम्मेवारी है कि हम किस तरह से यह तटबंदी तोड़ने की भावना उन लोगों में निर्माण करें। **नेताओं से निर्माण नहीं हो सकता, राजनेताओं में निर्माण नहीं हो सकता किन्तु अनुभव के आधार पर मैं यह कह सकता हूँ कि सामान्य अस्पृश्यों में यह भावना निर्माण हो सकती है।** हमलोग अपने क्षेत्र में, मजदूर क्षेत्र में, किसान क्षेत्र में, इसका अनुभव ले रहे हैं। और जो बहुत से बिखर गए हैं, उनके अनुयायी, उनके शिष्य, उनके बावजूद हम यह भावना निर्माण करने में यशस्वी हुए हैं, बहुत परिमाण में, हमें अपने-अपने क्षेत्र में इस बात को गंभीरता से लेना चाहिए। समाज के सभी विचारवान बंधु भी इस बात को गंभीरता से लेंगे तो यह बात होकर रहेगी, समाज में समरसता आ जाएगी, यह विश्वास प्रकट करते हुए मैं अपना भाषण पूरा करता हूँ। ☆

आरक्षण की उपयोगिता

- स्व0 दत्तोपंत ठेंगड़ी

'आरक्षण'- यह एक अच्छा तत्व है। हमारे परिवारों में शताब्दियों से **आरक्षण चलता आया है।** माँ है, जिसके दो बेटे हैं, स्वस्थ हैं, उनको हर दिन सुबह दूध मिलता है। तीसरा लड़का भी हो गया, पंगु है, कमजोर है, डॉक्टर ने कहा कि इसको पर्याप्त दूध पिलाना चाहिए। आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं है। माँ अपने दोनों **बड़े बेटों को कहती है कि तुमको मैं अब तक हर दिन सुबह दूध देती थी** किन्तु सबको पर्याप्त दूध देना मेरे लिए संभव नहीं है और डॉक्टर ने जो कहा है कि इसको पर्याप्त दूध दो तो आपको दूध के बजाय मैं केवल चाय दूँगी तो चलेगा क्या? दोनों लड़के कहते हैं कि हमारा भाई है, वो स्वस्थ हो जाय, ऐसी हमारी इच्छा है। इसलिए आप इसको दूध पिलाओ। हम चाय पी सकते हैं। यही आरक्षण है जो हिन्दू परिवारों में शताब्दियों से चलता आया है।

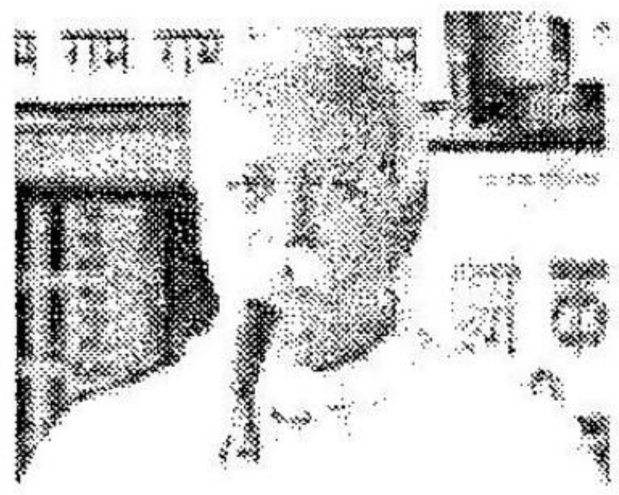

समरसता की दिशा

- मोहन भागवत

पशु चिकित्सक की पढ़ाई पूर्ण करने के बाद संघ प्रचारक बने। संप्रति संघ के सरकार्यवाह का दायित्व निर्वहन कर रहे हैं।

बाह्य आक्रमणों से असंतुलन

संघ का काम ही, सामाजिक समरसता का काम है। 1857 के बाद बहुत से संगठनों, महापुरुषों ने इस दिशा में बहुत ही प्रभावी काम किया है। संघ में भी यह काम अभी शुरु हुआ ऐसी बात नहीं है। संघ का काम 1925 विजयादशमी से प्रारंभ हुआ। अब तक के सारे प्रयोग, सारा अनुभव हमारे पास है, उसको आगे बढ़ाने का काम हमको करना है। विशेष रूप से पिछले कुछ वर्षों से कई प्रांतों में चल रहे हैं। शायद सबसे पुराना महाराष्ट्र का इस दिशा में प्रयास है, इसलिए सबसे आगे भी वही होगा। ये विशेष रुपसे प्रयास समय के तकाजे से शुरु हुए हैं। संघ की शाखा ही समरसता का साधन है लेकिन विशेष रुप से अन्यान्य नामों से या कार्यकर्ताओं का गट बनाकर जो प्रयास हुए है, उसका कारण बाह्य आक्रमण की परिस्थिति है। समाज पर आक्रमण हो रहा है। भेद और उपेक्षा के शिकार लोगों को समाज के जड़ों से काटकर राष्ट्र विरोधी के रुप में खड़े करना, यह प्रयास चल रहा है। हमारे प्रयास के प्रभावी होने और बढ़ने से इसकी काट निश्चित होने वाली है। यदि यह आक्रमण नहीं रहता तो भी समरसता का प्रयास करना अनिवार्य था, क्योंकि काल के प्रवाह के कारण विकृतियां एवं वर्तमान में तथाकथित विकास के कारण सामाजिक स्वास्थ्य घटा है।

परस्पर दूरियाँ बढ़ी हैं

बचपन में हम देखते थे शहरों में भी एक मुहल्ले में सब प्रकार के लोग रहते थे। स्वयं मेरा घर जहाँ था वहाँ आस-पास के सब घरों में आना-जाना मुक्त

रहता था बच्चों का। उनके घर के बच्चे हमारे घर में, हमारे उनके घर में, आगे के द्वार से घुसकर पीछे के द्वार से निकल जाते थे कोई रोक-टोक नहीं होता था। उसमें अनुसूचित जाति जनजाति के लोगों के भी घर थे। सवर्णों के घर भी थे। आज ऐसा नहीं है। उसमें विभिन्न आर्थिक स्तर की झोपड़ियाँ भी थीं। मराठी में जिसको बाड़ा कहते हैं उसमें सबको मुक्त संचार रहता था। एक दूसरे घर के पापड़-अचार अदला बदली होती थी। ये स्थिति थी। यह संभव इसलिए था कि पास रहना था। पड़ोसी होने के नाते एक दूसरे के जीवन में सहभाग था। कृत्रिम भेदभाव के बंधन, साथ रहने के कारण ज्यादा दिन टिकते नहीं। प्रबोधन भी तो हो ही रहा था। लेकिन अब परस्पर दूरी बढ़ी है। निम्न एवं उच्च आर्थिक स्तर के लोगों की बस्तियाँ, सिनेमा टाकीज, स्कूल, अखबार के हॉकर और बाजार भी अलग-अलग हमको दिखाई देते हैं। दूरदर्शन के कारण सर्वत्र समानता है। इतनी एक सेपरेशन की परिस्थिति रोजमर्रा के जीवन में हमें दिखाई देती है, एक-दूसरे के जीवन का अनुभव नहीं। एक किस्सा है- एक बड़े घर के लड़के को स्कूल में गरीबी पर निबंध लिखने के लिए कहा। उसने लिखा कि- हमारा ड्राइवर, माली, नौकरानी गरीब है। इसलिए हम गरीब है। गरीबी क्या होती है? ये उसको पता ही नहीं था। ऐसे कई अनुभव हैं। इस विषय को कभी-कभी सामाजिक वातावरण के कारण समझने वाले स्वयंसेवक को भी जब ऐसी बस्तियों में जाकर खड़ा किया, वहां पर रहने के लिए बताया, तब उनको ध्यान में आया कि इसके लिए विशेष प्रयास करना पड़ता है। पहले तो केवल शाखा चलती थी। एक भावना मन में आ जाती थी। उसको लेकर समाज में घूमना होता था। उसमें सबकुछ हो जाता था। लेकित अब ऐसा नहीं है। समाज में घूमने का दायरा ही संकुचित हो गया है और इसलिए एक दूसरे को पास रखने के विशेष प्रयास करने पड़ेंगे।

प्रांतानुसार : नाम, मुद्दे, कार्यपद्धति

केवल आक्रमण के कारण नहीं, तो ये जो दूरियाँ बनी है, इसके कारण भी समरसता के कार्य को बढ़ाना होगा। उसके लिए विशेष प्रयास की आवश्यकता है। इसलिए अपने प्रयत्न एक अनौपचारिक अंग के रुप में चलेगें। नाम, कार्यक्रम, कार्यकर्ता अलग-अलग होगें, परंतु कोई अखिल भारतीय संगठन नहीं करना है। एक संगठन इतने प्रकार की परिस्थितियों को ध्यान भी नहीं रख सकता। यह जो अनुभव

आये-इसमें हर प्रांत में अलग-अलग प्रकार की परिस्थिति है, तो हर प्रांत में बोलने के मुद्दे, उनकी कार्य पद्धति अलग हो सकती है। एक-एक प्रांत के लिए वहां बैठकर सोचना होगा। एक अनौपचारिक प्रयास के रुप में इसको अपने-अपने प्रांत के परिस्थिति के अनुरूप विकसित करना होगा।

निर्मल मन की आवश्यकता

काम क्या करना है? पहली बात ये समझ लेना होगा। ये समरसता का काम प्रचार का काम नही है। इसमें बड़े-बड़े भाषण देने का ज्यादा महत्व नहीं है। उत्तम वक्तृत्व का ज्यादा महत्व नहीं है। नेतागिरी उत्पन्न करने का काम भी नहीं है। Pressure group उत्पन्न करने का काम भी नहीं है। उपकार का काम भी नहीं है। मात्र कर्त्तव्य के नाते ही करना ऐसा रुखा काम भी नहीं है, बल्कि भावना का काम है। यह काम बढ़ता है तो उसके कारण वातावरण बदलता है। ये काम है मन को बदलने का। व्यक्ति का मन बनता है समाज का मन बनता है और बदलता है। ऐसा हर समाज का होता है। समय के अनुरुप बदलना पड़ता है। कोई मन में अपराध बोध लेकर जाना नहीं है। आप गलत कर रहे हैं और हम सुधार रहे हैं ऐसी भावना भी मन मे लेकर जाना नहीं है। अंग्रेजी में जिसे कहते हैं Inferiority complex or superiority complex भी नहीं होनी चाहिए। शुद्ध भावना लेकर जाएँ । हमारे बंधु हैं, उनको जोड़ना है। नहीं जोड़ने से, नुकसान होगा। अगर नुकसान नहीं होता तो भी बंधु हैं, उसे जोड़ना हमारा काम है। इतना निर्मल मन बनाना है। जैसा कहा गया कि जो दूर हुए हैं उनके लिए तो काम करना ही है, लेकिन जिनके कारण दूर हुए हैं उनमें भी परिवर्तन लाना है। गुरु जी के द्वारा बताया गया है कि **सवर्ण लोगों के मन का रोग है यह विषमता।** ये रहती कहाँ है? ये मन में रहती है। मन से हटाओ। इसलिए समरसता का कार्य पूर्वाग्रह, राजनीति आदि से दूर रहकर करने का काम है। हम इसके कार्यकर्त्ता हैं। कार्य के अनुरुप स्वयं को बनाना पड़ेगा।

आयाम

कार्य के तीन आयाम हैं-

1. बौद्धिक जगत का कार्य।
2. आचरण के परिप्रेक्ष्य में, प्रत्यक्ष व्यवहार जिसका बार-बार प्रयोग हुआ है।

3. कुछ कार्यक्रम (प्रकल्प) जिसे करने पड़ेंगे।

अनुभूति की अनिवार्यता

केवल चिंतन से काम नही चलेगा। बौद्धिक कार्य और विविध गतिविधि से पहले आचरण पर जोर देना है। आंचरण से दोनों का संतुलन रहता है। चिंतन तो हुआ है लेकिन चिंतन के अनुसार आचरण अनुभव में आया नहीं, इसलिए कल कहा गया है कि श्रद्धा नहीं है। पहले श्रद्धा जोड़ो। क्यों जोड़ो? हम कहते हैं वो सत्य है, लेकिन हम पर विश्वास नहीं है। क्यों नहीं है? वह है आचरण। हमारे आचरण का अनुभव वहां तक नहीं पहुँचा। ये व्यवहार मन से होना चाहिए। हम कार्यक्रम देंगे और ये कार्यक्रम हम पहली बार नहीं दे रहे हैं। सहभोजन के कार्यक्रम, अन्तर्जातीय विवाह के कार्यक्रम। इसके पहले भी हुए है, हो रहे हैं, होते रहेंगे। कल जैसे प्रश्न पूछा 'क्या मंदिर टूटने पर जैसा धक्का मन को लगता है वैसा दलितों पर अत्याचार होने पर लगता है क्या?' ये स्वभाव बना है क्या? सब का यह स्वभाव बनना आवश्यक है। स्वभाव मन से बनता है, बुद्धि से नहीं। बुद्धि से सब स्वयंसेवकों को मालूम है- यह विचार सब स्वयंसेवकों को बिना शर्त मान्य है। अपने विचार परिवार के संपर्क में आनेवाला कोई व्यक्ति इस विचार के विरोध में नहीं है। मौलिक बात सबको मालूम है, 2000 वर्षों की जो आदत है, उसको बदलने का सवाल है। जैसे किसी घर में अन्य महापुरुषों के साथ डा0 अम्बेडकर का चित्र देखकर सब प्रश्न अपने आप समाप्त हो गया। विश्वास बन गया। श्रद्धा बन गयी। पूछने का कारण नहीं। आप जो कह रहे हैं वो सब ठीक है। यह बात उत्पन्न करनी पड़ेगी। इसे स्वयं से शुरूआत करनी पड़ेगी।

अपने तथा अपने घर से शुरूआत करनी है

मैं और मेरा परिवार, फिर मेरे संगठन के मेरे साथी और फिर समाज- एक समाप्त होने के बाद दूसरा नहीं बल्कि तीनों साथ-साथ करने पड़ेगे। यानि कोई भी काम करते समय इन तीनों का ध्यान रखना पड़ेगा। समाज को समरस बनाते समय मैं, मेरे मन को एवं घर के वातावरण को ध्यान में रखूँगा तो भाषा अपने-आप ठीक हो जाएगी। नियंत्रित हो जाएगी। जो बता रहा हूँ उसे करने का भान रहेगा। फिर अपने घर में वैसा वातावरण बनने लगेगा, क्योंकि वहीं से तो शुरुआत करनी

होगी। अपने कार्यकर्ता ने बिहार में अपना अनुभव बताया। बिहार के बंधु जो बैठे हैं उन्होंने सुना है। एक शाखा बाल्मीकि बस्ती में शुरू हुई। इस विचार को ध्यान में रखकर प्रवास में गए थे। उन्होंने कार्यक्रम बनाया कि मुख्य शिक्षक (जो बाल्मीकि समाज का था) के घर में भोजन करेंगे। मुख्य शिक्षक को बड़ा हर्ष हुआ। वहाँ उन्होंने भोजन किया। लेकिन उन्होंने वर्णन किया कि बुद्धि से ये सब समझ लिया था, पचा लिया था, और तब वहां भोजन तय किया था। लेकिन पहला कौर लेते ही उन्हें ब्रह्मांड याद आ गया। सब मान्य है, करना भी है, करने के लिए बैठे हैं, लेकिन 2000 साल की आदत भी बोल रही है अंदर से। ये होता है। स्वाभाविक है। इस परिवर्तन में से हम सबको गुजरना पड़ेगा।

आचरित संवाद

हमलोगों में ये स्वभाव बने, अपनी श्रद्धा बने, अपने आचरण का स्वाभाविक अंग बने तो फिर हम समाज को बता सकेंगे। केवल समाज को बताने से नहीं आचरण भी वैसा रखना पड़ेगा। **हमारे मित्र जैसे अन्य समाज में बनते हैं वैसे इस समाज में भी बनने चाहिए। एक दूसरे के परिवार में आना जाना प्रारंभ होना चाहिए। पारिवारिक संबंध उत्पन्न होने चाहिए। तीज, त्योहारों, शादी-विवाह में एक दूसरे के घर आना जाना होना चाहिए।** हम वहां जाते हैं, यह काफी नहीं है। वो भी हमारे यहां आते हैं, जैसे बाकी लोग आते है, सहज स्वाभाविक रूप से ये सब हो रहा है, करना नहीं पड़ता6, भावना यहां तक पहुँचे। इसके लिए बहुत बड़ा प्रबोधन करना पड़ेगा। जिस स्वयंसेवक का मैंने अनुभव बताया उसकी माता जी छुआछूत मानती थी। कार्यकर्ता हैं इसलिए उन्होंने कहा कि आएंगे। सब कार्यकर्ता मेरे साथ बैठकर भोजन करेंगे। माता जी ने मान्य नहीं किया तो जिस दिन ऐसा कार्यक्रम बनता है **वे स्वयं भोजन बनाते हैं। उनके साथ बैठकर खाते हैं। उनके बर्तन भी स्वयं साफ करते हैं। आग्रहपूर्वक बुलाना चालू रखा।** वो विवाद नहीं कर सकते। पुराने विचार की माता जी मानती नहीं थीं, **जीवन के अंतिम 3 वर्षों में उनका हृदय परिवर्तन हो गया, वे मान गयीं।** पहले 20 साल तक उनको तपस्या करनी पड़ी इतने धीरज के साथ, इतने आग्रह के साथ। हम सब स्वयंसेवक, अपने संगठन के सब साथी, अपने घर परिवार के जीवन में, अपने कार्यकर्ताओं के जीवन में, लागू करने के लिए संवाद

शुरु करें और बढ़ाएँ। एक भगिनी ने कहा कि यह प्रबोधन अगर पहले होता तो घर का कुछ भिन्न व्यवहार होता। सामाजिक संकट की प्रखरता की अनुभूति हुई। यह जो अनुभव मन में हुआ वह नीचे तक पहुँचाना चाहिए। अपने-अपने संगठन में प्रत्येक व्यक्ति तक। उससे विश्वास बनेगा।

बौद्धिक अभ्यासी टोली

इसके बाद बौद्धिक जगत की बातें आती है। विपरीत प्रचार बहुत चल रहा है जिसके कारण यह दूरियां बढ़ रही हैं। दीवारें बन रही हैं। असत्य, अप्रचार यह चल रहा है। सत्य प्रचार लोगों तक पहुँचाना है। डा0 अम्बेडकर के राष्ट्रवादी विचार का दर्शन आपके सामने आया। वे ऐसा सोचते थे यह केवल हमलोग जानते हैं। बाहर वाले जानते नहीं। अन्य सबको यही मालूम है कि डा0 अम्बेडकर ने प्रतिज्ञा किया था कि मैं हिन्दू जन्मा हूँ पर हिन्दू नहीं मरूंगा। उसके पीछे उनका चिंतन, उसका परिणाम, उसको बता दिया गया है और यही निचोड़ उनके मन में बैठ गया है। इसको ठीक करने के लिए अध्ययन करने वाले कार्यकर्ताओं का एक संच होना चाहिए। समाज में अन्य लोग भी जो अध्ययन करते हैं उनसे मिलना चाहिए। बार-बार उनकी गोष्ठियां होते रहने चाहिए। अध्ययन होने चाहिए। उसके ऊपर भाषण करने चाहिए। असत्य का काट करना चाहिए। फिर आप जिस प्रचार माध्यम का प्रयोग करना चाहते हैं कर सकते हैं। लेकिन ये जो योजनाबद्ध रीति से हिन्दुत्व के खिलाफ अपप्रचार चल रहा है। उसी प्रकार से योजनाबद्ध रीति से हिन्दुत्व के अपप्रचार को निरस्त करते हुए हिन्दुत्व के सकारात्मक बातों का प्रचार करने वाले कार्यकर्ताओं का संच गठित करना चाहिए। प्रत्येक वर्ग, जातियां जो अपने समाज में हैं उनका अध्ययन करना चाहिए। उनका क्या दुःख है? उनकी क्या स्थिति है? सबको एकता के सूत्र में कैसे जोड़ा जा सकता है? इसके लिए क्या किया जा सकता है? वह तय करना, कार्यकर्ताओं का प्रबोधन करना, कार्यकर्ताओं को बातचीत के मुद्दे देना, सब प्रकार के ऐसे अध्ययन की जरूरत है। यह विवाद का मामला नहीं है। यह बुनियादी तथ्यात्मक मुद्दा है जिसको हमें अपने कार्यकर्ताओं के सामने, समाज के सामने रखने पड़ेंगे।

प्रवक्ता, गोष्ठी, साहित्य परिषद् ...

समाज सुधारकों का चिंतन क्या रहा है? अपना विश्लेषण बताने के बजाय समाज सुधारकों के शब्दों में उनका चिंतन बताना ज्यादा प्रभावी होता है। इतना प्रभावी होता है कि उसकी कोई काट नहीं कर सकता। तुलसीदास जी ने वह कहा तो क्यों कहा? ऐसा हम कहें इसके बजाय तुलसीदास जी ने ही इसके बारे में अन्य पृष्ठभूमि की जो चर्चा की है उसे बताएँगें तो ज्यादा प्रभावी काट होगा। अध्ययन की जरूरत है। ऐसा अध्ययन करने वाले लोगों को सामाजिक समरसता के प्रवक्ता के नाते खड़ा करना होगा। ऐसे वक्ताओं, अध्ययनकर्ताओं को सामने लाना पड़ेगा। उसके लिए गोष्ठियां करनी पड़ेगी, बौद्धिक जगत में चलने वाली गतिविधियां हमको भी करनी पड़ेगी। बढ़ते-बढ़ते हमको भी वहां साहित्य परिषद् आयोजित करनी पड़ेगी। अपने अध्ययन से ही इसकी शुरुआत करनी पड़ेगी।

धैर्य, संयम, युक्ति, प्रत्युत्पन्नमति

तीसरी प्रकार की गतिविधियों का स्वरूप है, महापुरुषों की जन्मतिथि, पुण्यतिथियाँ मिलकर मनाना, तीज-त्योहार के मौके पर सहभोज आयोजित करना, यह सब हो रहे हैं। अन्य लोग भी करते हैं। इसके साथ-साथ और सोचना पड़ेगा। ये काफी नहीं है। हमारे संगठन के कार्यक्रमों में, उपक्रमों में, नीतियों में हम सामाजिक समरसता के पक्षधर हैं ये बात परिलक्षित हो। ऐसा वातावरण अपने संगठन में बनाना पड़ेगा, तरह-तरह की समस्याएँ आती हैं। हम उस समय कौन सी भूमिका लेते हैं? इसको सोचना पड़ेगा। कोई घटना घटती है तो हम स्वयं बोलते हैं। कोई प्रहार होता है तो उसका जबाव हम कैसे देते हैं? सत्य ही बोलना है लेकिन उसको कैसे प्रकट करते हैं? यह महत्व की बात है। मर्चेंट आफ वेनिस की एक कथा है। शायलॉक ने करार किया था एंटोनियो से, या तो पैसा दोगे या एक पाउंड मांस दोगे शरीर का। उसका जहाज डूब गया। वो क्या कर सकता था। न्यायालय में खड़ा किया गया। शायलॉक चाकू लेकर आया था कि मांस दो। एंटोनियो के वकील जो उसकी प्रेयसी भी थी वो पुरुष वेष धारण करके आयी थी, उसने समझ लिया कि ये तो सरासर अन्याय है। यह व्यक्ति एंटोनियो से खार खाया हुआ है और इसीलिए ऐसा कर रहा है। लेकिन करार भी सत्य है कि पैसा या एक पाउण्ड मांस; मांस तो देना है। उसने

एक युक्ति निकाली। बोली मांस तो देना ही चाहिए लेकिन खून का एक बूँद भी नहीं निकलना चाहिए। बाजी पलट गयी। सीधी सपाट बात है कि सत्य है लेकिन वैर है, इसलिए सत्य की बात न्यायालय में नहीं टिकती। सत्य है लेकिन न्यायालय की भाषा में बोलना पड़ेगा। पू0 बाला साहब सरसंघचालक बने तो प्रेस कांफ्रेंस हुई- नागपुर में। पत्रकारों ने प्रश्न पूछा कि संघ में लगातार महाराष्ट्रियन सरसंघचालक बन रहे हैं इस पर आपका क्या कहना है? अब यह सरासर अन्याय है। यह हम सब जानते हैं, ये पूछना ही बेकार है। प्रेस कांफ्रेंस में यह भाषा नहीं चलती तो उन्होंने कोई युक्तिवाद नहीं किया। पत्रकार को कहा कि तुम गलत प्रश्न पूछ रहे हो। ऐसे प्रश्न से कोई लाभ नहीं। यह बात तुम महाराष्ट्र में कह रहे हो। उससे संघ का कुछ बुरा नहीं होगा। भले लोगों को सुनकर शायद अच्छा लगेगा, प्रांतीय भावना होने के कारण। तुम यह बात पूछो कि लगातार तीसरी बार एक ब्राह्मण सरसंघचालक क्यों बना? मैं इसका जवाब दूँगा। उसने अपना प्रश्न वापस ले लिया। इसके बाद पूरे प्रेस कांफ्रेंस में कोई खुराफात नहीं की। ये जो बताना है- वो किसको बताना है? क्यों बताना है? बोलने की भाषा सीखनी पड़ेगी। वाणी पर संयम रखना पड़ेगा। कई प्रकार की कटु परीक्षाएँ सामने आयेगी, क्योंकि अविश्वास है। आजतक लोग जो ठगे गए हैं? सद्भावना लेकर प्रामाणिक व्यक्ति भी कोई जाता है तो पहले उसकी बहुत कड़ी परीक्षा होगी। हम अगर भड़क जाएंगे तो काम नहीं चलेगा, वहां की मान्यता भी नहीं बदलेगी। समरसता भी नहीं आएगी। लोग देंगे ना तुलसीदास जी के उदाहरण। और कई बात को लेकर लोग उखड़ेंगे। भाषा भी किसी श्रद्धालु स्वयंसेवक को पसंद नहीं पड़ेगी। लेकिन जहाँ-जहाँ भी ऐसी परीक्षाएँ हुई हैं वहाँ-वहाँ हमारे स्वयंसेवकों ने अपने दिमाग पर बर्फ रखा और शांति से सामना की। हम हिंदू नहीं हैं। यही से शुरुआत होती है। फिर राम के बारे में भी प्रश्न उठाए जाते हैं जो प्रिय हैं, श्रद्धास्पद हैं- हिन्दू सभ्यता में। ये सब जो विकृति आई है उसको हटाना है। जोड़ना है इसलिए उसको सहन करना पड़ेगा। जो असत्य बात है वो टिकने वाली नहीं है लेकिन कैसे जाएगी ये हमको तय करना है। इस प्रकार दिमाग ठंढा रखते हुए सब गतिविधियों में हम सक्रिय रहें। उपक्रम करें और समाज में कहीं भी दरार पड़े तो उसका हम उपचार करें। ऐसी बात होनी ही नहीं चाहिए कि समाज में दो वर्ग खड़े

हो, डंडा लेकर झगड़ा करने के लिए। हम जहां हैं वहां हम झगड़ा नहीं होने देंगे। नहीं होने देंगे इतनी हमारी ताकत नहीं है, और अगर हो जाता है तो हम उसे Refuse करें, उसकी भी ताकत नहीं है। और कुछ होता है तो समाज अपना संतुलन खो न दे, ऐसा संतुलित व्यवहार रखकर हम बीच में पड़कर मध्यस्थता करे। कम से कम अपना दिमाग भटकने नहीं दें। वहां हमारी कितनी शक्ति है? उस समाज के परिप्रेक्ष्य में हम केवल देखने वाले दर्शक नहीं है। हम उसके लिए कुछ कर रहे हैं। आज हमारे पास ताकत नहीं है। इसलिए समाज में भावना चाहे जितनी भड़की हो परन्तु स्वयंसेवकों की नहीं भड़की है। विद्यार्थी परिषद् के कारण आरक्षण आंदोलन में भी विद्यार्थियों में जातिगत विभाजन नहीं हुआ यह समाचारपत्रों में निकला। किसने निकाला- हिन्दू ने, टाइम्स ऑफ इंडिया ने।

सामाजिक भूमिका

एक समय riots का प्रकरण चल रहा था, तो Peace Meeting में सबलोग आए, तथाकथित नेता भी आ गए। मीटिंग में बैठकर नेताजी ने एक नजर सब लोगों को देख लिया फिर इंस्पेक्टर को कहा कि यह मीटिंग बेकार है। इसे बुलाने की आवश्यकता नहीं थी। उन्होंने कहा कि क्यों? तो कहा कि क्यों आप अपना समय बर्बाद कर रहे हैं? यहाँ पर संघ के कार्यकर्ता हैं और अगर ये यहाँ हैं तो हमको विश्वास है कि यहाँ पर गड़बड़ी नहीं होने वाली है। ये लोग हैं तो डेढ़ घंटा क्यों. बैठना? हमारे लोगों का रोल जितनी शक्ति है उतना है। कहीं पर हम पहले पहुंचकर मतान्तरण को रोक देते हैं जो सामाजिक विद्वेष के कारण उत्पन्न हुआ। कहीं पर हम यह कहते हैं कि सारे समाज की भावना भड़की, हमारी नहीं भड़की। इसलिए समाज को अपनी भड़की हुई भावना को शांत करने के लिए धुरी मिल गयी। लेकिन कहीं पर भी हम लोग प्रेक्षक नहीं हैं। हमलोग इन सब बातों में ख्याल रखें, कि जिनमें समाज के दो वर्ग एक-दूसरे के विरुद्ध खड़े न हो जाएं, इसलिए हम अपनी कुछ भूमिका करते हैं।

समग्र चिंतन, तदनुरुप कार्यकर्ता व कार्य

इन तीन आयामों को ध्यान में रखकर, स्वयं के अंदर, अपने घर परिवार

के अंदर, अपने संगठन के अंदर कार्यक्रम के परे जाकर पारिवारिक संबंध बनाना। यह अपनी एक विशिष्ट पद्धति है काम करने की। हमको भी अपने-अपने प्रांत में ऐसा कार्य करने वाले लोग खड़े करने हैं। बौद्धिक गतिविधि की क्षमता रखने वाले और कार्य करने वाले लोग अपने-अपने संगठन में इस प्रकार का आयोजन करने वाले, संवाद रखने वाले, धीरे-धीरे सबका जीवन बदलने वाले लोग और शिक्षा समरसता के लिए जो गतिविधि करनी पड़ती है, कार्यक्रम करने पड़ते हैं, उपक्रम करने पड़ते हैं उनको करने वाले लोग- ऐसी टोलियाँ गठित करनी पड़ेगी। प्रत्येक प्रांत की परिस्थिति अलग-अलग है। इसका कोई अखिल भारतीय मंच बनाने का विचार नहीं है। लेकिन प्रत्येक प्रांत में यह कार्य चल पड़ना चाहिए। इसको एक अलग मोर्चा के रूप में या मंच के रूप में खड़ी करने की आवश्यकता नहीं है। जहाँ चल पड़ा है वहां चलने दीजिए। लेकिन अन्यान्य संगठन के काम करने वाले अपने कार्यकर्ताओं में से कुछ लोगों को जुटाकर अपने-अपने संगठन का काम करते हुए इस काम को चलाने वाले और कुछ लोग इसी विषय को लेकर तीन प्रकार से इस काम को आगे बढ़ाने वाले, उसके लिए प्रवास करने वाले, हर प्रांत में 25-30 लोगों की, प्रांत का विचार करने वाली टोली खड़े करने हैं। एक आधार आवश्यक है इसलिए इस कार्य का एक संयोजक नियुक्त कर सकते हैं। अगर पैसा है तो हिसाब किताब रखने के लिए एक कोषाध्यक्ष। ऐसी टोली बन जाए और उस टोली का काम शुरु हो, अध्ययन शुरु हो। समरसता के मामले में हमारे प्रांत में समाज की स्थिति क्या है? हमारे कार्य की स्थिति क्या है? कितनी हमारी पहुँच है? जहां पहुँचनी चाहिए वहां की समस्या क्या है? लोगों की भाव-भावनाएँ कैसी हैं? बौद्धिक जगत में कैसा-कैसा विचार प्रक्षेपण हो रहा है? हमको उसके लिए क्या-क्या करना पड़ेगा? हम कितना कर सकते हैं? जो कर सकते हैं उसकी मात्रा कैसे बढ़ा सकते हैं? और जो नहीं कर सकते हैं उसके लिए व्यक्ति और साधन कहाँ से जुटा सकते हैं? इस पर विचार करके प्रयास प्रारंभ हो। ऐसे प्रयास प्रारंभ होने में 6 महीना या साल भर लग सकते हैं।

अर्जित साख को पर्याप्त बढ़ायेंगे

हमको जो प्रबोधन मिला है उनको हजम करके हम उन प्रयासों को चलाएँगे, कुछ थोड़ा सा आकार बनेगा इसके बाद आगे का विचार फिर करेंगे। लेकिन ऐसी एक टोली और उस टोली के अनौपचारिक पुरोधा के नाते दो-तीन कार्यकर्ता के नेतृत्व

में सब टोली के प्रयास चलना, ये स्थिति अगले सत्र के मध्य तक उत्पन्न हो सकती है। अभी से साल भर का समय है। इस साल भर में ऐसा निश्चित प्रयास करने वाला एक 25-30 कार्यकर्ताओं का समूह प्रांत स्तर पर होने चाहिए। उनमें से कुछ अन्य-अन्य संगठनों में इस प्रयास को करने वाले, इस प्रयास को देखने वाले रहेंगे। लेकिन मात्र इस समरसता को सोचने वाले, चिंतन के प्रकाश में कुछ करने वाले, राह खोजने वाले, प्रयासों को आगे बढ़ाने वाले 8-10 की टोली बन जाए, जिनके प्रमुखता में काम चले और ऐसे लोग उभर कर आ जाएँ तो फिर साल भर के बाद हो सकता है फिर से हम ऐसे ही जमा हो कर विचार करें। इस दृष्टि से यह प्रयास कुछ प्रांतों में पहले से चले, कुछ प्रांत में शुरु होने जा रहे हैं। लेकिन परिस्थिति के परिप्रेक्ष्य में ऐसा लगा कि एक तरफ आक्रमण भी बढ़ रहे हैं, Bhopal decleration जैसी योजनाएँ घोषित भी हो रही हैं। सदा के लिए राजनैतिक, आर्थिक दृष्टि से इस समाज को दोफाड़ किया जाए इसकी योजना बढ़ रही है। दूसरी तरफ एक जमाना था जब यह कहा गया कि तुम्हारी संघ की शक्ति ही कितनी है? अब ऐसा नहीं है, समाज का विश्वास भी है और जो हमसे दूर हैं उनके मन में भाव ऐसा है कि कुछ भी हो, संघ वाले सच्चे लोग हैं। एक बार मुसलमानों की बस्ती में संगठन के एक कार्यकर्ता का भाषण हुआ। उसने जो बातें कही कि आप लोग जो अपने आप को मुसलमान मानते हो ये हमको मंजूर नहीं। हम आपको मुसलमान के नाते नहीं देखते हैं। हम आपको अपने भाई के नाते देखते हैं। इसलिए आधी रोटी हम खाएँगे और आधी तोड़कर आपको खिलायेंगे। लेकिन हम रोटी खाएँगें और आप जलेबी ऐसा भी नहीं चलेगा। जो बोलना चाहिए उसने साफ-साफ बोला। बाद में मुसलमानों की प्रतिक्रिया थी कि 'कुछ भी हो संघ वाले साफ-साफ बोलते हैं। ये लोग पीठ में छुरा घोंपने वालों में से नहीं हैं'। इतनी तो साख हमारी सब जगह है। हम जो कह रहे हैं यही हमारे मन में है और जो मन में है वही हम करेंगे। इतना विश्वास अब सब जगह है। इसको लेकर हम जा सकते हैं। भटकाने वाली जो शक्तियां हैं उनसे भी अपने समाज के लोगों का मोहभंग होना प्रारंभ हो गया है। प्रमाण अलग-अलग है। लेकिन मोहभंग की प्रक्रिया सब जगह प्रारंभ हो गयी है। हमारी साख बढ़ी है। एक विश्वास है- सच्चे लोग हैं। हमारी समस्याओं पर भी ध्यान देंगे, ऐसा अभी विश्वास नहीं हुआ है। लेकिन सच्चे लोग हैं, अगर यह कार्य हाथ में लेते हैं तो प्रामाणिकता से पार लगाएँगे इतना उनको लगता है। इसका लाभ लेकर ये दूरियां सदा के लिए कम करने का काम अब किया जा सकता है, हमको इसमें आगे बढ़ना चाहिए। ✶

मुद्रक : मोहुल इंटरप्राइजेज. दू. 93347 18266

हमारा कार्य संपूर्ण समाज के लिए है। उसके किसी भी अंग की उपेक्षा करने से काम नहीं चलेगा। समस्त हिन्दू बंधुओं, चाहे वे किसी श्रेणी के हों, के साथ हमारा व्यवहार समान रूप से प्रेम का ही होना चाहिए।

- प0पू0 डॉ0 हेडगेवार

हम जो कार्य पूरे जोश से करना चाहते हैं वह केवल आर्थिक या राजनीतिक समरसता का नहीं है। हम वास्तविक परिवर्तन, पूर्ण समरसता चाहते हैं। राजनीति से इस कार्य में सफलता प्राप्त करना असंभव है। सभी लोगों के दैनन्दिन व्यवहार में उनके हृदय से इस भावना का उद्वेग उत्साह से फूटना चाहिए।

- प0पू0 श्री गुरुजी

यदि अस्पृश्यता पाप नहीं है तो समाज में अन्य कुछ भी पाप नहीं है। इस प्रथा का समूल विनाश आवश्यक है।

- प0पू0 बाला साहब देवरस

अलग-अलग करके बाँटना समाज 'व्यवस्था' नहीं है। यह तो 'अव्यवस्था' है। एक दूसरे को जोड़ना, एकता के सूत्र में पिरोना ही 'धर्म' है। ... लोगों के दिलों में जब 'जाति', 'वर्ण' या 'वर्ग' से आगे बढ़कर 'हिन्दू' की भावना तीव्र होगी तब सारे झगड़े मिट जाएँगे।

- श्री हो0 वे0 शेषाद्रि

अस्पृश्यता हिन्दू समाज पर लगा सबसे बड़ा कलंक है। समाज की इस बुराई का हमारे शत्रुओं ने लाभ उठाया है। इसी बुराई के कारण हमारे हिन्दू बंधुओं का धर्मांतरण किया गया है। आज भी यह मतान्तरण का सिलसिला जारी है।

- श्री के0 सूर्यनारायण राव

महर्षि वाल्मीकि :

करुणा को अभिव्यक्त करने वाले आदि कवि, जिन्होनें रामायण को पुस्तकाकार किया।

संत रविदास

वेद धरम है पूरण धरमा,
वेद अतिरिक्त और सब भरमा.

नारायण गुरू

एक समाज, एक धर्म, एक ईश्वर ही सब लोगों का पालनकर्त्ता है।

शंकर देव

उत्तर पूर्व में सनातन धर्म की ज्योति फैलाने वाले संत।

बिरसा मुंडा

तुम तीर धनुष बनाते रहना जब तक तुम तीर धनुष लेकर खड़े होगे मैं तुम्हारे बीच आकर खड़ा हो जाऊँगा।

डॉ0 भीमराव अम्बेडकर

हिन्दुस्थान में समरसता का अलख जगाने वाले।

3/-